International Journal of Advanced Research in Engineering Technology & Science
ISSN: 2349-2819
Email: editor@ijarets.org Volume-4, Issue-11 November- 2017 www.ijarets.org

# संस्कृत वांगमय में वर्णित व्यावसायिक विषयों की सम सामयिक सार्थकता

**डॉ. कृष्णा गौड**
**व्याख्याता संस्कृत**
**राजकीय कला महाविद्यालय**
**सीकर (राजस्थान)**

स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदधीत्य वेदं

न विजानाति योऽर्थम्

यो अर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमष्नुते

नाकमेति ज्ञान विधूतपाप्मा

जिस प्रकार निरूक्त का उपरोक्त मन्त्र बताता है कि जो वेद का स्वर और पाठमात्र पढ़कर अर्थ नहीं जानता वह भार को उठाने वाला मात्र है ठीक वही स्थिति आज समाज की सर्वत्र नजर आ रही है। संस्कृत वांग्मय में वर्णित व्यावसायिक विषयों की सम सामयिक सार्थकता पर चर्चा करना मानो ठीक वैसा ही है जैसे वेद को विज्ञान के स्थान पर एक गद्य–पद्य संग्रह मात्र करार देना।

संस्कृत वांगमय से जुड़े विषयों पर विषेषकर उनके व्यावसायिक महत्व से इन विषयों के सार्वकालिक महत्व से परिचित है और उनके समक्ष इस विषय पर उद्बोधन देना निष्चय ही सूर्य को दीपक दिखाने के सदृष होगा। फिर भी इसे मात्र अपने कर्तव्य का एक भाग समझते हुये मैं आप लोगो के समक्ष इस सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करना चाहूंगी।

भला प्रकाष, गति, उष्मा को क्या हम सामयिक या किसी काल विषेष के सन्दर्भ में बांध कर उनके महत्व को कम आंक सकते हैं ठीक उसी प्रकार संस्कृत भाषा में उन्नत महान भारतीय वैदिक कालीन विज्ञान भला कैसे सामयिक बन्धनों में कैद किया जा सकता है। ऋग्वेद कहता है –

उत त्वः पष्यन्त ददर्ष वाचमुत

त्वः षृणवन्न श्रणोतयेनाम्

उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्त्रे

जायेव पत्य उषति सुवासाः।।

जो अविद्वान है वे सुनते हुये भी नहीं सुनते, देखते हुये भी नही देखते, बोलते हुये नहीं बोलते अर्थात अविद्वान लोग इस विद्या वाणी के रहस्य को नहीं जान सकते लेकिन जो षब्द अर्थ और सम्बन्ध को जानने वाला है उसके लिये विद्या अपने स्वरूप का स्वयं प्रकाष करती है।

जिस प्रकार बिना दूध को चखे यह जान पाना एक दुष्कर कृत्य है कि दूध षक्कर युक्त है अथवा नहीं ठीक उसी प्रकार बिना वास्तविक अर्थो में संस्कृत वांगमय में संग्राहित विभिन्न विषयक विज्ञान का अनुभव किये यह जान पाना आम जन के लिये एक दुषकृत्य है कि संस्कृत भाषा मे छिपा पड़ा यह ज्ञान पुंज न केवल धर्म, काम एवं मोक्ष को प्रदान करने वाला है वरन सभी युगों में यह अर्थ के एक अंष मात्र के अध्ययन कर लेने से सुविधा सम्पन्न जीविकोंपार्जन में जुटे हम लोग आम जन के मन से उस विभ्रम को दूर करे जो यह मान बैठा है कि संस्कृत भाषा आज अन्य अर्वाचीन भाषाओं के समतुल्य धनोपार्जन में साधक नहीं बन सकती।

दरअसल कोई भी भाषा धनोपार्जन का मूल कारण नहीं होती अपितु वह सिर्फ एक माध्यम मात्र होती है जिसके सहारे उस भाषा में समुपलब्ध ज्ञान के भण्डार को ग्रहण किया जा सके और उस ज्ञान प्राप्ती के जरिये धन प्राप्त किया जा सके। अंग्रेजी भाषा के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सुस्थापित होने का प्रमुख कारण इस भाषा में उपलब्ध वैज्ञानिक साहित्य ही रहा है और यदि हम इस दृष्टि से विष्व में वर्तमान में प्रचलित भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन करें तो हम पायेगें कि संस्कृत भाषा में जो वैज्ञानिक सामग्री न केवल आयुर्वेद, ज्योतिष, वास्तु, वनस्पति और प्राणी षास्त्र के क्षेत्र में अपितु तमाम दूसरे विषयों जैसे

विधि राजनीति, अर्थ षास्त्र, कर्मकाण्ड, सांस्कृतिक एवं कला षास्त्र आदि में उपलब्ध है वैसी सामग्री किसी अन्य भाषा में उपलब्ध नहीं है।

तो फिर क्या कारण रहा है कि आज संस्कृत के अध्ययन के प्रति लोगों का खासकर व्यवसाय जगत से जुड़े लोगो का आग्रह कमजोर पड़ा है यदि हम इसका षोध परक अध्ययन करे तो हम पाते है कि संस्कृत भाषा में उपलब्ध इस वैदिक कालीन और उत्तर वैदिक कालीन विज्ञान का मूल ज्ञान लोगो की पहुँच से बाहर हो गया है। यह ठीक वैसी ही स्थिति है कि हम मृग की तरह स्वयं में कस्तुरी तलाषने के स्थान पर यत्र तत्र उसकी सुगंधी के पीछे भाग रहे है। जिस प्रकार ग्रहण काल में उसी स्थान पर स्थिति होते हुये भी सूर्य और चन्द्रमा का दर्षन नहीं होता उसी प्रकार इस वांग्मय में उपलब्ध यह वैज्ञानिक ज्ञान हमारी आंखो से ओझल होता जा रहा है।

लेकिन जिन लोगो ने लगन के साथ इस ज्ञान की खोज में स्वयं को समर्पित किया उन लोगो ने इसमें उपलब्ध व्यावसायिक विषयों के माध्यम से अकूत धन सम्पदा को एकत्र किया है। सौभाग्य की बात यह है कि ''काम'' को ही अन्तिम पुरूषार्थ मान बैठा सम्पूर्ण पाष्चात्य विष्व आज अपनी व्यवस्था की अपूर्णता के बोझ तले स्वयं जड़ता को प्राप्त करने के पष्चात अब भारतीय संस्कृति में छिपे ज्ञान की खोज में आसरा तलाषने लगा है।

ऐसा लगने लगा है कि भारतीय संस्कृति पर जिस ग्रहण की चर्चा उपर हुई है उसका ग्रहण काल समापन की ओर से प्रकाष की किरणें स्पष्ट तौर पर संकेत दे रही है कि आने वाली सदी फिर इस ज्ञान के पुरोधाओं की होगी और यह किस कदर धन धान्य को देने वाला होगा इसका उदाहरण महर्षि महेष योगी जैसे कर्मयोगियों को प्राप्त अर्थ सिद्धी से लगाया जा सकता है जिन्होनें संस्कृत भाषा में उपलब्ध ज्ञान के आधार कोष के कोटिषः अंष मात्र से करोड़ों रूपयों का धन अर्जित किया है।

दर असल देष के हजारों सालों की गुलामी और इस दौरान भारतीय संस्कृति और संस्कृत वांग्मय के ग्रन्थालयों को नष्ट करने के कुचक्रों के साथ केबल बाबु और किताबी षिक्षक पैदा करने वाली लार्ड मैकाले की षिक्षा पद्धति के प्रसार की दोहरी मार क चलते जहां एक और हमारी इस देव भाषा में

उपलब्ध ज्ञान का विलोप हुआ वहीं षिक्षा को ''सेवा प्राप्ती'' का माध्यम मात्र बना दिया गया जिसके चलते इसके विकास की प्रक्रिया भी नष्ट हो गई।

यह दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य है कि इन सबके चलते लोगो के मध्य षिक्षा का एकमात्र उद्देष्य उदर पूर्ति लायक धन प्राप्त कर लेना ही रह गया और धीरे धीरे बढ़ती आबादी और घटते संसाधनों के कारण लोग यह समझ समझ कर अपने पुत्र–पुत्रियों के लिये विषय चयन करने लगे कि उन्हें पेट भरने लायक रोजगार उपलब्ध हो सके। इसी भेड़ चाल का एक उदाहरण पिछले दषकों में वाणिजय विषय के अध्ययन के प्रति लोगो की बढ़ी लिप्सा से देखा जा सकता है लेकिन ऐसे विषय किस प्रकार क्षण भंगुर होते है यह तक जाहिर हो गया जब उन्हें रोजगार अवसर उपलब्ध नही हुये और आज इस विषय से लोगो का मोह भंग हुआ। यही स्थिति षीघ्र ही आंग्ल एवं हिन्दी भाषा के माध्यम से षिक्षा प्राप्त कर्ताओं को हो रही है जो उपाधि प्राप्त कर बेरोजगार की लम्बी कतारों का हिस्सा मात्र बन कर रहे है। आज देष में ऐसे उपाधि धारी बेरोजगार की संख्या एक करोड़ के आंकड़े को छू रही है।

यह मध्यकालीन भारतीय समाज के सोच की दुखद परिणिति ही कही जा सकती है कि संस्कृत के विद्वत जनों के तप, त्याग और बलिदान को उनकी अयोग्यता, ढोंग और अकर्मण्यता मान लिया गया जबकि प्रारम्भिक काल से ही भारतीय समाज मे अर्थ को पर्याप्त महत्व दिया गया और कहा गया कि महेन्द्रमप्यअर्थहीनं न बहु मन्यते लोकः और अकुलीनोऽपि धनी कुलीनाद्विषिष्टः इसी को पूर्णार्थ में व्यक्त करते आचार्य चाणक्य के सूत्र कहते है दारिद्रयम् खलु पुरूषस्य जीवितं मरणम्।

हमारे चार प्रमुख पुरूषार्थो में अर्थ को न केवल सम्मिलित किया गया अपितु इसे विभिन्न पुरूषार्थो में अधिक महत्व भी मिला। कौटिलीय अर्थषास्त्र में कहा गया है अर्थ एवं प्रधान इति कौटिल्यः, अर्थ मूलों ही धर्मकामाविति। भारतीय सनातन धर्म में जीविकों पार्जन के लिये पर्याप्त प्रबन्ध किये गये।

संस्कृत वांग्मय में व्यावसायिक विषयों की विविधता और इसके महत्व को वैदिक काल मे ही किस वैज्ञानिक ढंग से समझ लिया गया था इसीलिये वेदों के उपरान्त आयुर्वेद अर्थात जो चरक सुश्रुत आदि ऋषि मुनि प्रणीत वैधक षास्त्र है उसको अर्थ, क्रिया, षस्त्र, छेदन, भेदन, लेप, चिकित्सा, निदान, औषध, पथ्य, षारीर, देष, काल आदि के साथ चार वर्ष तक पढ़ने की व्यवस्था थी। तदुपरान्त धनुर्वेद अर्थात जो

राज सम्बन्धी और प्रजा सम्बन्धी के साथ सीखने का प्रावधान था। ग्रन्धर्ववेद के तहत जिसे मायन विद्या कहते है। स्वर, राग, रागिणी, ताल, ग्राम, तान, वादित्र, नृत्य, गीत आदि को सीखने का प्रावधान था।

अर्थवेद की जिसको षिल्प विद्या कहते है उसमें पदार्थ, गुण, विज्ञान, कार्य कौषल, नानाविध पदार्थो का निर्माण, पृथ्वी से लेकर आकाष पर्यन्त की विद्या के अध्ययन का प्रावधान था जो ऐष्वर्य को देने वाला है। इसी प्रकार ज्योतिष षास्त्र सूर्य सिद्धान्त आदि जिसमे बीज गणित, अंक, भुगोल, खगोल और भूगर्म विद्या है इसे सीखने का प्रावधान था। तत्पष्चात सभी प्रकार की हस्त क्रिया और यन्त्र कला को सीखने का प्रावधान था। इन विषयों का ज्ञाता भला कोई भी काल हो उसके लाभ से कैसे वंचित हो सकता है ?

संस्कृत तो समस्त आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं जैसे हिन्दी, पंजाबी, मराठी, बंगाली आदि की जननी और आधार भाषा है और यदि इन भाषाओं की समसामयिक सार्थकता है तो भला संस्कृत की जिससे इन सभी भाषाओं का व्याकरण और इनका षब्द समूह पोषित है इसकी भला सामयिक सार्थकता पर प्रष्न चिन्ह कैसे उत्पन्न किया जा सकता है ? हिन्दी भाषा संस्कृत से पालि–प्राकृत, अपभ्रंष, अवहटट आदि से यात्रा करती हुई ही आज के आधुनिक रूप में पहुंची है यही स्थिति गुराती, पंजाबी, मराठी एवं बंगाली आदि भाषाओं की है। अतः इन सब भाषाओं के अच्छे ज्ञान के लिये संस्कृत का आधारभूत ज्ञान होना आवष्यक है। वस्तुतः संस्कृत का ज्ञान हुये बिना भाषिक दृष्टि से हिन्दी आदि आधुनिक भारतीय भाषाओं पर पूर्ण अधिकार होना कठिन है।

संस्कृत वांगमय में वर्णित व्यावसायिक विषयों की सम सामयिक सार्थकता वस्तुतः ऐसा विस्तृत विषय है जिस पर संक्षेप में अपनी बात रख पाना अत्यधिक दुष्कर कार्य है तथापि ''आयुर्वेद'' की उपयोगिता, उपादेयता एवं प्रसंगिकता पर अपनी बात रखना चाहूंगी।

संस्कृत वांगमय में वर्णित तमाम दूसरे विषयों के समान ही आयुर्वेद भी एक उन्नत वैज्ञानिक विषय रहा है और इसके वैज्ञानिक ज्ञान के बदौलत ही हजारो वर्षो से यह अक्षुण्ण रूप से केवल लोगों की विभिन्न व्याधियों का निराकरण करता रहा है अपितु एक सम्पूर्ण आयुर्विज्ञान के रूप में यह विष्व को स्वस्थ रहने का रास्ता बताता रहा है। रहन, सहन, आहार, विहार, दिनचर्या, रात्रि चर्या जेसे परमावष्यक जीवन

विज्ञान के ज्ञान में आज भी विष्व की कोई भी अन्य चिकित्सा पद्धति इसके समतुल्य षोध परक व्यवस्था नहीं बना पायी।

यद्यपि दुर्योग से पर्याप्त संरक्षण के अभाव में इस विद्या का एक बहुत बड़ा भाग प्रचलन से बाहर हो गया है जिसमें कि तमाम तरह की षल्य क्रिया जैसी की सुश्रुत संहिता में हमें देखने को मिलती हैं षामिल है। लेकिन वर्तमान में अत्यधिक प्रचलित मेडीकल चिकित्सा पद्धति के अत्यधिक दोषों से युक्त होने के कारण जिनमें मुख्य उसकी औषधियों के ''साइड इफेक्ट्स'' अन्यत्र दुष्प्रभाव एवं इस चिकित्सा पद्धति में आहार–विहारादि ज्ञान का अभाव होना षामिल है इसके स्थान पर पुनः आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति को सम्पूर्ण विष्व में प्रतिष्ठित कर रहा है। और दुनिया भर मे तेजी इस पद्धति के प्रति विषेषकर अमरीका आदि विकसित देषो में चेतना एवं मांग बढ़ रही है।

आज जिस कदर हृदय–सर्जरी हो रही है पूरी दुनिया आयुर्वेद सिद्धान्तों के माध्यम से बिना सर्जरी के हृदय रोग से बचाव के लिये आयुर्वेद विज्ञानियों की ओर देख रही है और ये विषेषज्ञ इसी के चलते पर्याप्त अर्थोपार्जन भी कर रहे है।

आयुर्वेद से जुड़े विभिन्न उत्पाद जैसी चटनी, मुरब्बे एवं विभिन्न सौन्दर्य उत्पाद जैसे तेल, साबुन, षेम्पू, दन्त मंजन, सौन्दर्य प्रसाधन आदि की मांग आज बहुत तेजी से बढ़ रही है आयुर्वेदिक टॉनिक जैसे च्यवन प्राष आदि आज घर घर मे लोकप्रियता क नये आयाम छू रहे हैं और इस विज्ञान में न केवल वैज्ञानिक स्तर पर, न केवल ज्ञान के स्तर पर अपितु व्यवसायिक स्तर पर भी अद्भुत सामयिक सफलताऐं प्राप्त की जा सकती है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि संस्कृत ज्ञान के अभाव मे किसी व्यक्ति के इस क्षेत्र में बहुत विकास की कल्पना की जा सके।

आयुर्वेद के क्षेत्र में अनेक तरीकों से व्यवसाय वृद्धि के साथ साथ जन सेवा भी की जा सकती है। जहां राजकीय सेवा के लिये इसके माध्यम से अनेक अवसर उपलब्ध होते है वही निजी तौर पर चिकित्सा के माध्यम से भी देष भर मे हजारों वैद्यगण धन और यष दोनो अर्जित कर रहे है।

चिकित्सा के अतिरिक्त अन्य क्षेत्र जैसे औषध उत्पादन, जड़ी बूटी की खेती, स्वस्थ जीवन हेतु मार्गदर्षन, आहार–विहार, पथ्य–अपथ्य सम्बन्धी जानकारी, योग आदि की षिक्षा, सौन्दर्य प्रसाधनादि का निर्माण आज आयुर्वेद के माध्यम से पर्याप्त धन अर्जन के जरिये है।

एक उदाहरण के साथ में अपना पत्र समाप्त करना चाहूंगी की यदि आप से यह कल्पना करने को कहा जाये की समकालीन भारत में क्या कोई व्यक्ति संस्कृत वांगमय में उपलब्ध किसी व्यावसायिक विषय के एक अंग मात्र से अरबों रूपयों की राषि एकत्र कर सकता है तो षायद बहुत सीमित लोग ही सोच पायेंगे कि ऐसा करना सम्भव है लेकिन यह कोरी कल्पना नहीं कि आर.सी.बर्मन ने आज 18 अरब रूपयो से अधिक की सम्पत्ति इसी तरह अर्जित की है। सम्भवतः आर.सी.बर्मन के नाम से अधिकांषत लोग परिचित नहीं होंगे लेकिन उनकी कम्पनी ''डाबर'' के नाम से सभी परिचित होंगे जो आयुर्वेदिक औषध एवं सौन्दर्य प्रसाधन के उत्पादों से जुड़ी है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक आयुर्वेद के अंष मात्र की मदद से आज ही के भारत में फले फूले इस व्यवसायी की सम्पत्ति 18 अरब 29 करोड़ रूपये है और आज वह देष के 10 षीर्षतम धनपतियों मे से एक है।

समापन में मैं फिर यही लिखना चाहूंगी कि चाहे हम आयुर्वेद की बात करें या ज्योतिष, गणित या वास्तु षास्त्र की, चाहें हम वनस्पति, प्राणी या राजनीति षास्त्र की बात करें अथवा कृषि और अर्थ षास्त्र की, चाहे हम कर्मकाण्ड, षास्त्रीय संगीत कला एवं षिल्प षास्त्र की बात करें या विमान विधा, षालि होत्र या विधि की संस्कृत वांगमय के इन महान विषयों की सामयिकता सदैव अजर अमर ही प्रतीत होती है आवष्यकता बस निरन्तर षोध की है और इससे भी बढ़कर हमारी इस महान विरासत को लुप्त होने से बचाने की है।

संस्कृत ने भले ही लोगो को बहुत धन सम्पन्न न बनाया हो लेकिन उसने लोगो को संस्कार युक्त बनाया है। जिसके लिये पाष्चात्य दुनिया आज हर सम्भव कीमत देने को तैयार है यही प्रमाणित करता है इसकी सर्वकालिक प्राथमिकता को मैं इस सन्दर्भ में मनु जी के इस आदेष के साथ अपनी बात समाप्त करना चाहूंगी –

नात्मानमवमन्येत पूर्वाभिरसमृद्धिभि।

आमृत्योः श्रियमन्विछेन्नैनां मन्येत दुर्लभाम्।।

अर्थात धन का प्रयत्न करने पर भी यदि धन न मिले तो पहले असंपत्तियों से अपना अपमान न करे कि मैं बड़ा मंद भाग्य हूं, और लक्ष्मी को दुर्लभ न जानकर मरण पर्यन्त उसको पाने का उद्योग करता रहे।

इति षुभम्।।

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय
2. सुश्रुत संहिता, आचार्य सुश्रुत
3. मनुस्मृति, आचार्य मनु
4. ऋग्वेद दषम मण्डल
5. निरूक्त (यास्क)